बालविकास

रूसो ने बालकों की तीन अवस्थाओं की कल्पना की थी : शैशवावस्था, जो एक वर्ष से पाँच तक रहती है, बाल्यावस्था जो पाँच वर्ष से 12 वर्ष तक रहती है और किशोरावस्था जो 12 वर्ष से 20 वर्ष तक रहती है। आधुनिक मनोविश्लेषण विज्ञान के विशेषज्ञों ने रूसों की उक्त कल्पना का समर्थन बालक की कामवासना के विकास के आधार पर किया है। मनोविश्लेषण वैज्ञानिक बालक के मानसिक विकास में उसकी ज्ञानात्मक शक्तियों की प्रधानता न मानकर भावों की ही प्रधानता मानते हैं। मनुष्य के भावों के विकस के साथ ही उसकी

अन्य मानसिक शक्तियों का विकास होता है। भाव वासना का सहगामी तत्व है। मनुष्य की मूल अथवा मुख्य वासना कामवासना है। अतएव जैसे जैसे उसका विकास होता है वैसे वैसे बालक का मानसिक विकास होता है।

मनोविश्लेषकों के कथनानुसार बालक का वासनात्मक विकास पांच वर्ष की अवस्था में ही हो जाता है। इसके बाद उसकी काम वासना अंतर्हित हो जाती है। वह तेरह वर्ष में फिर से जाग्रत होती है और इस बार जाग्रत होकर सदा बढती ही रहती है। इसके कारण बालक का किशोर जीवन बड़े महत्व का होता है। इसके पूर्व के जीवन में बालक का भावात्मक विकास रुक जाता है, परंतु उसका शारीरिक और बौद्धिक विकास जारी रहता है। किशोरावस्था में बालक का सभी प्रकार का विकास पूर्णरूपेण होता है।

उपर्युक्त बालमनोविकास की कल्पना एकांगी दिखाई देती है। अतएव बालमनोविज्ञान में विशेष रुचि रखने वाले मनोवैज्ञानिकों ने बालकों का सीधा निरीक्षण करके और उनके व्यवहारों के विषय में प्रयोग करके, जो निष्कर्ष निकाले वे अधिक महत्व के हैं। उन्होंने अपने दत्त निम्नलिखित सात विभागों में रखना अधिक उचित समझा है।

बालविकास के अध्ययन के लिए बालजीवन निम्नलिखित सात विभागों में विभक्त कर लिया जाता है :

(1) गर्भवासी,

(2) नवजात शिशु,

(3) एक वर्षीय शिशु,

(4) डगमगाकर चलनेवाला,

(5) पाठशालारोही,

(6) कैशोरोन्मुख तथा

(7) किशोर।

गर्भवासी बालक

सभी प्राणियों का शारीरिक विकास उनकी गर्भावस्था से ही होता है। इस विकास में दो प्रमुख बातें काम करती हैं, एक प्राकृतिक परिपक्वता और दूसरी सीखने की सहज वृत्ति। अंतर केवल इतना ही है कि जहाँ दूसरे प्राणियों के जीवनविकास में प्राकृतिक परिपक्वता का अधिक महत्व रहता है, वहाँ बालक के विकास में सीखने की प्रधानता रहती है। मनोवैज्ञानिक प्रयोगों से यह सिद्ध हो गया है कि जब बालक माँ के गर्भ में दो महीने का रहता

है तभी से सीखने लगता है। पर उसके सीखने की जानकारी इस समय करना कठिन होता है।

गर्भावस्था में बालक के सीखने की क्रिया की जानकारी के लिए मनोवैज्ञानिकों ने विशेष प्रकार के यंत्रों का आविष्कार किया है। उसके क्रियाकलापों को जानने के लिए एक्स किरण का उपयोग किया जाता है। अभिमन्यु ने चक्रव्यूह तोड़ने की क्रिया जब वह गर्भ में था, तभी सीख ली थी। वह चक्रव्यूह को वहीं तक तोड़ सका जहाँ तक उसने गर्भ में तोड़ना सीखा था। जिस बालक की माँ को गर्भावस्था में सदा भयभीत रखा जाता है, वह बालक डरपोक होता है। संसार के लड़ाकू लोग ऐसी माताओं की संतान थे जिन्हें गर्भावस्था में युद्ध का जीवन व्यतीत करना पड़ा था। नेपोलियन और शिवा जी की माताओं का जीवन ऐसा ही था। इसी तरह रेलवे क्वार्टर में

रहनेवाले कर्मचारियों के बच्चे गर्भस्थ अवस्था से ही रेल की गड़गड़ाहट, सीटी आदि सुनने के आदी हो जाते हैं।

नवजात शिशु

नवजात शिशु जन्म लेते ही रोता है। यह शुभ सूचक है। यदि बच्चा अस्वस्थ है, तो उसके मुँह से रोने की आवाज नहीं निकलती। पैदा होने के कुछ ही घंटों बाद उसे भूख लगती है। यदि इस बच्चे के मुँह में माँ का स्तन दे दिया जाए, तो वह दूध खींचने लगता है। यदि बच्चे को दो तीन दिन तक माँ के स्तन से दूध न पिलाया जाए, तो वह माँ के स्तन से दूध खींचना ही भूल जाता है। माँ का दूध भी स्तन को बालक के मुंह में डाले बिना नहीं निकलता।

नवजात शिशु को दु:ख सुख की अनुभूति दो तीन वर्ष के बालक जैसी नहीं होती। नवजात शिशु एक साल तक काफी रोता है, परंतु उसकी आँख से आँसू नहीं

निकलता। नवजात शिशु की बहुत थोड़ी संवेदनाएँ होती हैं। जोर की आवाज उसे चौंकाती है और तेज प्रकाश भी संवेदना उत्पन्न करता है, परंतु रंग के विषय में उसकी संवेदना स्पष्ट नहीं होती। नवजात शिशु की भावात्मक अनुभूतियाँ भी सीमित होती हैं। वह मुस्कुराता तो है, परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि आनंद की अनुभूतियों के कारण वह मुस्कराता है। वह 20 घंटे तक सोता रहता है। उसका अधिक सोना ही स्वास्थ्यवर्धक है। नवजात शिशु अधिकतर सहज क्रियाएँ ही करता है।

एक साल का बालक

एक साल का बालक अपने और बाहरी वातावरण में भेद करना सीख लेता है। वह अपना हाथ पैर और सिर आवश्यकता के अनुसार इधर उधर चलाता है। वह खड़े होने की चेष्टा करता है और यदि कोई हाथ पकड़कर उसे

चलाए, तो वह चलने की भी चेष्टा करता है। बालक के अंदर हर एक पदार्थ को छूने की, उठाने की एवं मुँह तक ले जाने की बाध्य प्रेरणा रहती है। वह स्वावलंबी बनने की चेष्टा करता है। वह स्वार्थी रहता है। यदि कोई चीज उसे दी जाए, तो वह प्रसन्नता प्रदर्शित करता है और यदि उसे छीन लिया जाए तो वह रोने लगता है। एक और दो वर्ष के बीच बच्चा भाषा का ज्ञान प्राप्त करना प्रारंभ कर देता है। वह एक दो शब्द भी सीख जाता है।

दो वर्षीय बालक

दो वर्ष का बालक अपने वातावरण में सदा खोज करता रहता है। वह इधर उधर दौड़ता, कूदता-फाँदता, गिरता रहता है। वह सीढ़ियों पर चढ़ने की चेष्टा करता है। सीढ़ियाँ चढ़ लेता है, लेकिन उतरने में लुढ़क जाता है। वह सब कप से दूध पी लेता है और चम्मच को काम में

ला सकता है। जब उसे कपड़े पहनाए जाते हैं, तब वह कपड़े पहनाने में बड़ों की मदद करता है। तस्वीर देखकर वह वस्तुओं का नाम बताता है और दो चार शब्द की कविता कह लेता है। दो से चार वर्ष की अवस्था में बच्चे का शब्दकोश 300 शब्दों का हो जाता है। तीन वर्ष तक का बालक अपने आपके बारे में संज्ञा शब्द से ही बोध करता है, सर्वनाम से नहीं। वह अपना नाम जानता है। वह यह भी बता सकता है कि वह लड़का है या लड़की। शब्दों का उच्चारण बड़ा ही फूहर रहता है। इन बच्चों की शब्दावली विलक्षण प्रकार की होती है। जिन शब्दों का वे उच्चारण नहीं कर सकते, उनके बदले में वे दूसरे शब्द काम में ले आते हैं। पानी के लिए मम्मा कहते हैं, चिड़िया को चू चू और कुत्ते को तू तू कहते हैं। उन्हें अपने भावों को सँभालने की शक्ति नहीं रहती। वे सभी चीजें अपने ही लिए चाहते हैं। यदि कोई व्यक्ति उनसे कोई वस्तु छीन ले, तो वे बहुत ही क्रुद्ध हो जाते हैं। दो से पाँच वर्ष का

शिशु सभी बातें सीखता है। वह 10 घंटे प्रति दिन चलता रहता है। ऐसा बालक सामाजिकता प्रदर्शित नहीं करता और बच्चों में रुचि न दिखाकर बड़ों में रुचि दिखाता है। बच्चों के साथ खेलने में वह सहयोग नहीं दिखाता, वरन् उनका अनुकरण मात्र करता है। वह व्यक्तियों में रुचि न रखकर वस्तुओं में रुचि रखता है और अच्छी लगनेवाली वस्तु दूसरों से छीन लेता है।

इस उम्र के बच्चों की भावात्मक अनुभूतियाँ पर्याप्त रहती हैं। वह दु:ख पाने पर तेजी से रोता है और कभी कभी बड़ा ही तूफान मचाता है, जैसे पैर पटकना और सिर पीटना। उसमें दूसरों के भावों को समझने की शक्ति नहीं रहती और न उनके प्रति वह सहानुभूति ही दिखाता हैं। यदि वह किसी बच्चे को रोते हुए देखता है, तो वह परेशानी की मुद्रा में उसे देखता रहता है, स्वयं नहीं रोने लगता। शिशु के भय बहुत थोड़े होते हैं। तीक्ष्ण आवाज

तथाा नीचे गिरने से वह डरता है। इसी प्रकार आगंतुकों से और नई चीजों से वह डरता है, परंतु वह बहुत से डरावने जानवरों से नहीं डरता। यदि उसे सर्प से डरवाया न जाए, तो वह उसे पकड़ने दौड़ेगा। शिशु को अनेक डर कुशिक्षा के द्वारा प्राप्त होते हैं।

छह वर्ष का बालक

जन्म से लेकर पाँच वर्ष की अवस्था शैशव अवस्था कही जाती है। छह वर्ष की अवस्था से ही बाल्यकाल माना गया है। बाल्यकाल स्कूल जाने की अवस्था है। यह काल 10, 11 वर्ष तक माना गया है। बाल्यकाल में बालक अपने शरीर की परवाह ठीक प्रकार से कर सकता है और दूसरों के साथ ठीक व्यवहार कर लेता है। वह चलते चलते अचानक गिर नहीं पड़ता। ऊँची जगहों पर चढ़ जाता है और वहाँ से उतर आता है। इस काल में बालकों

को कूदना, फाँदना, दौड़ना, सभी बातों में मजा आता है। जहाँ शिशु अपनी उँगुलियों का ठीक से उपयोग नहीं कर पाता, वहाँ बालक उनसे बहुत कुछ काम ले सकता है। वह अपने कपड़े, जूते, स्वयं पहन सकता है। बालों में कंघी कर सकता है और स्वयं स्नान कर सकता है। इन सब कामों को वह बड़े लोगों से सदा सीखता रहता है।

पाँच वर्ष के शिशु में खेलने की प्रवृत्ति होती है। वह अनेक प्रकार की वस्तुएँ खेल के लिए चाहता है। ऐसे बच्चों के लिए मैकिनो और प्लैस्टिसीन अथवा गीली मिट्टी बहुत उपयोगी होती है। वह अनेक प्रकार की चित्रकारी करता है। अब वह जो चित्र बनाता है, वे प्राय: सार्थक होते हैं।

छह वर्ष की उम्र तक बच्चे का बौद्धिक विकास काफी हो जाता है। वह गिनती का अर्थ समझने लगता है। 20 तक

गिनती सरलता से गिन लेता है और 20 पदार्थों को गिन भी लेता है। पाँच वर्ष की अवस्था तक बच्चे को पहाड़े का अर्थ नहीं आता। जो भी उसे रटाया जाए वह रट लेता है। इस समय बच्चा पुस्तक पढ़ने की चेष्टा करता है, परंतु उसका बहुत कुछ पढ़ना सार्थक नहीं होता। उसका शब्दकोश 2,500 शब्दों का हो जाता है। उसकी भाषा में केवल सरल वाक्य नहीं रहते, वरन् मिश्रित और जटिल वाक्य भी रहते हैं। भाषा के विकास के साथ साथ उसके विचारों में भी पर्याप्त विकास होता है। इस उम्र का बालक कालबोधक शब्दों को ठीक से काम में लाता है। उसका कार्य कारण के आधार पर सोचना अभी विकसित नहीं होता।

इस उम्र में बालक की भावनाएँ काफी विकसित हो जाती हैं। वह प्रसन्नता, क्रोध, भय, निराशा आदि भावों को स्पष्ट रूप से और प्राय: ठीक ढंग से व्यक्त करता है।

यदि कोई उसे चिढ़ा दे, या कोई उसकी चीज छीन ले, तो वह उसे मारने की चेष्टा करता है। बालक के इस काल के भय उसके जीवन में बड़ा महत्व रखते हैं। यदि किसी बालक का पिता क्रोधी हुआ और वह बात बात में बच्चे को डाँटता रहा, तो बालक सदा के लिए डरपोक बन जाता है। और यदि बालक में कोई प्रतिभा हुई, तो उसके मन में पिता के प्रति और भी मानसिक ग्रंथि बन जाती है।

बाल्यकाल आदतों के डालने का काल है। पाँच और दस वर्ष के बीच बालक में अनेक प्रकार की भली और बुरी आदतें पड़ जाती हैं। अविभावकों पर ही इन आदतों के डालने की जिम्मेदारी रहती है। जैसा वे उसे बनाते हैं, वैसा वह बन जाता है। यदि किसी बालक को भूत प्रेत की कहानियाँ इस समय सुनाई जाएँ, तो वह जीवन भर के लिए डरपोक बन जाता है।

बाल्यकाल में बच्चे को भयभीत करनेवाली वस्तुओं की संख्या बढ़ जाती है। अब वह अचानक तेज आवाज सुनकर तथा ऊँचे स्थानों पर जाने से तो नहीं डरता, परंतु अंधकार में जाने से तथा अकेले रहने से, बड़े बड़े जानवरों, से तथा नवागंतुकों से डरने लगता है। इसके कल्पित डर बहुत से हो जाते हैं। वह भूत प्रेत से तो डरता ही है। यह डाकुओं और चोरों के नाम से भी डरता है।

बाल्यकाल में बच्चे को आत्मप्रकाशन की उतनी स्वतंत्रता नहीं रहती जितनी उसे पहले रहती है। उसे स्कूल जाना पड़ता है और मास्टर की निगरानी में रहना पड़ता है। वहाँ उसे शीलवान बनना पड़ता है। यह शील दिखाऊ होता है। इसका बदला वह घर पर चुकाता है। स्कूल से लौटकर वह माँ के सामने बहुत सी शैतानी करता है।

छह से दस वर्ष के बीच के बालक के सामाजिक भाव काफी विकसित हो जाते हैं। वह लड़के और लड़की दोनों से मिलता जुलता है, परंतु उसके अधिक मित्र अपने ही समानलिंग के बालकों में होते हैं। लड़के लड़कियों को प्राय: मूर्ख समझते हैं और लड़कियाँ लड़को का उद्दंड तथा फूहड़ समझती हैं। लड़के और लड़कियों के खेलों में अब भिन्नता आ जाती है। लड़कियाँ गुड़ियों, चूल्हे चक्की आदि से खेलती हैं और लड़के नाव, गेंद, तीर कमान, पैरगाड़ी आदि से खेलते हैं।

इस काल में बालक के चुने हुए मित्र रहते हैं। वह इन्हीं के पास रहना अधिक पसंद करता है। यदि उन्हें काई मारे पीटे तो वह उन्हें बचाने की कोशिश करता है। वह उन्हें अपने खाने पीने की चीजें भी देता है, परंतु यह मित्रता सदा बदलती रहती है। इस प्रकार बालक का अनेक लोगों से प्यार करने का अभ्यास हो जाता हैं। उसके

सामाजिक भावों का प्रसार भी इसी मित्रता के भावों के प्रसार के साथ होता रहता हैं।

छह से दस वर्ष के बालक में भले और बुरे का विवेक उत्पन्न हो जाता है। उसमें साधारणत: आत्मनियंत्रण की शक्ति का उदय हो जाता है। बड़ों के द्वारा प्रोत्साहित होने पर बालक में आत्म नियंत्रण की शक्ति बढ़ती जाती है। यही समय है जब कि बालक में नैतिक आचरण का बीजारोपण होता है। अत्यंत लाड़ में रहनेवाले बालक की नैतिक बुद्धि सुप्त बनी रहती हैं, अथवा वह प्रारंभ से ही विकृत हो जाती है। इसी प्रकार अधिक ताड़ना में रखे गए बालक में झूठा शिष्टाचार आ जाता है। उसमें भले बुरे को पहचानने की क्षमता ही नहीं रहती। आदतों के वशीभूत होकर ऐसे बालक भला आचरण करना सीख लेते हैं पर इन आदतों का आधार भय रहता है।

किशोरपूर्वावस्था

यह अवस्था 10 से 13 वर्ष की अवस्था है। आधुनिक मनोविज्ञान के अनुसार यह अवस्था भावों के अंतर्हित होने की अवस्था कहलाती है। इस काल में बालक अपनी शारीरिक और बौद्धिक प्रगति तो करता है, परंतु भावों की दृष्टि से उसका अधिक विकास नहीं होता। इस अवस्था में लड़कों की अपेक्षा लड़कियाँ अधिक तीव्रता से बढ़ती हैं। उनका भाषाज्ञान अधिक हो जाता है। उनकी शारीरिक वृद्धि भी लड़कों की अपेक्षा अधिक होती है। अब लड़के और लड़कियों का भेद सभी बातों में स्पष्ट होने लगता है।

बालक इस काल में दूसरों के प्रति पहले जैसी सहानुभूति नहीं दिखाता। वह दूसरों को चिढ़ाने तथा तंग करने में आनंद का अनुभव करता है। उसे अब साहस के काम

की कहानियाँ अधिक पसंद आती हैं। वह कल्पना में विचरण करना आरंभ कर देता है।

इस समय बच्चे गिरोह में रहना पसंद करते हैं। लड़के और लड़कियों के खेल भिन्न भिन्न हो जाते हैं और उनके आचरण के नियमों में भी भेद हो जाता है। इनके खेलों में शारीरिक क्रियाएँ, अधिक होती हैं। लड़के बाइसिकिल चलाना, बढ़ईगिरी करना, कूदना, उछलना और तैरना सीखना चाहते हैं और लड़कियाँ रस्सी कूदना, नाचना, गाना, हारमोनियम बजाना और रेडियो सुनना पसंद करती हैं।

इस काल में बच्चों की नैतिक बुद्धि जाग्रत नहीं रहती। वे बहुत से अनुचित व्यवहार भी कर डालते हैं। कुछ बालकों में चोरी की आदतें लग जाती हैं, परंतु अभिभावकों को इससे डरना नहीं चाहिए। बालकों की

नैतिक धारणाओं को ठीक करने के लिए उन्हें उचित वातावरण उपस्थित करना चाहिए। इस काल में बालक के सबसे महत्व के शिक्षक उसके माता पिता नहीं, वरन् समवयस्क बालक रहते हैं। वह गिरोह में रहना पसंद करता है। उसे गिरोह से अलग तो करना नहीं चाहिए, पर गिरोह के बालकों के बारे में उसके अभिभावकों को जानकारी रखनी चाहिए। मनुष्य की नैतिकता का विकास उसकी सामाजिकता के साथ साथ होता है और उसके सामाजिक भाव ही उसके कामों में लगाते हैं।

इस काल में बालक का पर्याप्त बौद्धिक विकास होता है। उसका शब्दकोश काफी बढ़ जाता है। इसमें आठ दस हजार शब्द आ जाते हैं। उसके वाक्य भी अब अधिक लंबे होते हैं। इनमें छह शब्द तक रहते हैं। इस काल में बालक बहादुरी के कारनामों वाली, जादू की और दूसरे देशों के बच्चों के वृत्तांतवाली पुस्तकें पढ़ना चाहता है।

वह जानना चाहता है कि दूसरे देश के लोग कैसे रहते हैं और क्या करते हैं। अतएव इस काल में बच्चों को ऐतिहासिक तथा भौगोलिक कहानियाँ सुनाना, उनके मानसिक विकास के लिए उपयुक्त होता है। इस समय बच्चे लिखना सीखने लगते हैं, परंतु उनके लिखने में गलतियाँ बहुत होती हैं। उनके अक्षर सुंदर नहीं होते और विराम चिह्न आदि का लिखते समय उन्हें ज्ञान नहीं रहता। लिखने में सुधार करना इस समय नितांत आवश्यक है। जो पाठशालाएँ इस काल में बालकों की लेखनशैली पर ध्यान नहीं देतीं वे जीवन भर के लिए बालक को इस दिशा से निकम्मा बना देती हैं।
लेखनशैली और अक्षरों को सुंदर बनाने की बालक में रुचि इसी काल में पैदा की जा सकती है। मनुष्य की लेखनशैली का उसके चरित्र पर गहरा प्रभाव पड़ता है। लेखन की सावाधानी चरित्र की सावधानी बन जाती है।

अतएव इस काल में बालकों की लेखनशैली पर ध्यान रखना नितांत आवश्यक है।

किशोरावस्था

मुख्य लेख **किशोरावस्था**

किशोरावस्था मनुष्य के जीवन का बसंतकाल माना गया है। यह काल बारह से उन्नीस वर्ष तक रहता है, परंतु किसी किसी व्यक्ति में यह बाईस वर्ष तक चला जाता है। यह काल भी सभी प्रकार की मानसिक शक्तियों के विकास का समय है। भावों के विकास के साथ साथ बालक की कल्पना का विकास होता है। उसमें सभी प्रकार के सौंदर्य की रुचि उत्पन्न होती है और बालक इसी समय नए नए और ऊँचे ऊँचे आदर्शों को अपनाता है। बालक भविष्य में जो कुछ होता है, उसकी पूरी रूपरेखा उसकी किशोरावस्था में बन जाती है। जिस

बालक ने धन कमाने का स्वप्न देखा, वह अपने जीवन में धन कमाने में लगता है। इसी प्रकार जिस बालक के मन में कविता और कला के प्रति लगन हो जाती है, वह इन्हीं में महानता प्राप्त करने की चेष्टा करता और इनमें सफलता प्राप्त करना ही वह जीवन की सफलता मानता है। जो बालक किशोरावस्था में समाज सुधारक और नेतागिरी के स्वप्न देखते हैं, वे आगे चलकर इन बातों में आगे बढ़ते है।

पश्चिम में किशोर अवस्था का विशेष अध्ययन कई मनोवैज्ञानिकों ने किया है। किशोर अवस्था काम भावना के विकास की अवस्था है। कामवासना के कारण ही बालक अपने में नवशक्ति का अनुभव करता है। वह सौंदर्य का उपासक तथा महानता का पुजारी बनता है। उसी से उसे बहादुरी के काम करने की प्रेरणा मिलती है।

बाहरी कड़ियाँ

- किशोरावस्था की परिभाषा

"https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=बालविकास&oldid=2502280" से लिया गया

Last edited 3 years ago by Sanjeev ...

सामग्री CC BY-SA 3.0 के अधीन है जब तक अलग से उल्लेख ना किया गया हो।